**International Journal of Humanities and Social Science Research**
**ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22**
**Received: 13-01-2019; Accepted: 16-02-2019**
**www.socialsciencejournal.in**
**Volume 5; Issue 2; March 2019; Page No. 42-45**

# 'प्रसाद' के काव्य : बिम्ब विधान में वविध्य

**डॉ0 समयलाल प्रजापति**
सहायक प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय महाविद्यालय, बरका, जिला सिंगरौलीं, मध्य प्रदेश, भारत।

**सारांश**
इन्द्रियों के आधार पर बिम्बों का वर्गीकरण केवल विवेचन की सुविधा के लिए किया जाता है, क्योंकि बिम्ब–विधान की प्रक्रिया में मन एकाधिक इन्द्रियों के विषय में संचरण करता है। अतः बिम्ब स्वरूपतः किसी न किसी अंश तक संश्लिष्ट रहते हैं। वर्ग विशेष के अन्तर्गत उनका स्वरूप–निर्धारण किसी एक तत्व की प्रधानता के आधार पर होता है। कवि की सफलता इस बात में है कि वह बिम्बों का संग्रहण इस प्रकार करे कि उसकी रचना क्रय–हीन बिम्बों का मात्र ''एलबम'' न बन जाये। एक ही प्रतिपाद्य विषय के विविध पक्षों के सौन्दर्य का उद्‌घाटन करने के लिये रूप, शब्द आदि विविध बिम्बों का स्थान–स्थान पर संयोजन किया जाता है।

**मूल शब्द :** बिम्ब विधान, वविध्य।

## प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद छायावादी काव्यधारा के प्रवर्तक कवि हैं। छायावाद में जिस स्वच्छन्द मनोवृत्ति के अनुकूल नये–नये छन्द–विधान, लाक्षणिकता एवं प्रतीकात्मकता के सहित नूतन अभिव्यंजना–प्रणाली को अपनाया गया है, प्रसाद ने 'करुणालय' (माघ सं. 1969), 'महाराणा का महत्व' (सं. 1971) और 'प्रेमपथिक' (सं. 1971) में ही उसका श्रीगणेश कर दिया था। इसके अतिरिक्त स्वयं आचार्य शुक्ल ने प्रसाद की जिन कविताओं को नवीन छायावादी शैली घोषित किया ळें[1] उनमें से 'खोलो द्वार' कविता 'इन्दु' पत्रिका में पौष सं. 1970 में ही प्रकाशित हो चुकी थी, जबकि शुक्ल जी द्वारा घोषित छायावाद की सर्वप्रथम रचना गुप्त जी कृत 'नक्षत्र–निपात' कविता 'सरस्वती' में ज्येष्ठ सं. 1971 में प्रकाशित हुई थी। अतः आचार्य शुक्ल की मान्यता के आधार पर भी प्रसाद की सं. 1969 तथा 1970 वि. के अन्तर्गत अधिकांश रचनाएँ छायावादी काव्यधारा का स्वरूप प्रस्तुत करती हैं, जिनको पीछे 'झरना' काव्य–संग्रह में संकलित किया गया था। प्रसाद से ही प्रेरणा लेकर छायावाद के क्षेत्र में निराला, सुमित्रानन्दन पंत, महादेवी वर्मा, राजकुमार वर्मा आदि ने पदार्पण किया था। इसीलिए आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने ठीक ही लिखा है कि उस समय की प्रचलित कविता की दिशा बदलने में अग्रणी श्री जयशंकर प्रसाद ही ठहरते हैं। श्रीधर पाठक की अनूदित कृतियों के अतिरिक्त उनकी अन्य रचनाएँ प्रसाद के पहले की नहीं।"[2]

अतएव प्रसाद छायावाद काव्यधारा के प्रवर्तक ही नहीं हैं, अपितु उसकी प्रौढ़ता, शालीनता, गुरुता एवं गम्भीरता के भी पोषक कवि हैं।

प्रसाद की कविताओं में प्रकृति के सचेतन रूप के साथ–साथ मानव के लौकिक एवं पारलौकिक जीवन की जैसी रमणीय झाँकी अंकित है, वैसी अन्यत्र किसी कवि की कविता में दृष्टिगोचर नहीं होती। प्रसाद की इन कविताओं में अपरोक्ष अनुभूति, समरसता तथा प्राकृतिक सौन्दर्य के द्वारा 'अहं' का 'इदं' से समन्वय करने का जैसा सुन्दर प्रयत्न हुआ, वैसा किसी और कवि ने नहीं किया है। इसके अतिरिक्त प्रसाद की छायावादी कविताओं में ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौन्दर्यमय प्रतीक–विधान तथा उपचार वक्रता के साथ स्वानुभूति की विवृति का जैसा सुन्दर स्वरूप दृष्टिगोचर होता है, वैसा अन्यत्र कहीं दिखाई नहीं देता।

बिम्बन शिल्प के बिना काव्य में काव्यास्वाद संभव नहीं है। स्वल्प विभावादिकों के प्रकाशन से भी जो आनन्दानुभूति पाठक या श्रोता को होती है उसका कारण अथव्याप्ति और बिम्ब का प्रयोग ही है। बिम्ब प्रयुक्त कवि अभिनेता की भूमिका निभाता है और उसके द्वारा प्रयुक्त बिम्ब अर्थव्याप्ति के दृष्टि से विशेष समादरणीय है। बिम्ब को कवि का वाग अभिनय कहना व्यापक और अर्थ परख प्रतीत होता है। लोक व्यवहार के हेतु यही शब्द बिम्ब है जिसमें प्रत्येक भाव या विचार अभिव्यक्ति मूर्तिमंत बिम्ब रूप है, सारा इतिहास सम्पूर्ण काव्य इसी दर्पण रूपी वागमय बिम्ब में सुरक्षित है जो आज हमारे समझ नहीं है, उनकी कीर्ति, उनकी नीखिल भाव सम्पति इन्हीं बिम्बों के माध्यम से अर्थव्याप्ति का आधार बन कर हमारे समझ उपस्थित है।

वास्तव में अर्थ बिम्ब के माध्यम तो शब्द ही है। उनके अभाव में कवि कर्म असंभव प्रतीत होता है, इस दृष्टि से विचार करें तो काव्य का यथार्थ शरीर तो शब्द ही ठहरता है जो उसे अस्तित्व प्रदान करता है। अर्थसत्ता का प्रकाशक है। उसके रूप का आथापक, सही कलेवर एवं सार्थकता का हेतु है।

प्रसाद के काव्यके बिम्ब विधान के अन्तर्गत अर्थ व्याप्ति और बिम्ब मानवीय क्रिया कलापों प्रकृति के विविध रूपों पशु पक्षियों के बहुविध गतिविधियों एवं विपुल घटनाओं का स्वाभाविक अर्थबिम्ब उनकी उचनाओं में सर्वत्र व्याप्त है।

आँसू प्रसाद की सर्वाधिक लोकप्रिय रचना है। इसकी संगीतात्मकता एवं विरहानुभूति ने न जाने कितने काव्य–प्रेमियों पर जादू डाल दिया है कि वे प्रसाद की अन्य समस्त कृतियों में से ''आँसू'' को ही सर्वाधिक प्रिय एवं रुचिकर समझते हैं और अनेक ऐसे आँसू–प्रेमी सहृदय भी मिलेंगे, जिन्हें ''आँसू'' काव्य आदि से अन्त तक कंठस्थ है। प्रसाद का यह ''आँसू'' काव्य सर्वप्रथम सं. 1982 वि. में प्रकाशित हुआ था। इसके प्रथम संस्करण में केवल 252 पंक्तियाँ थीं, किन्तु 8 वर्ष उपरान्त इसका द्वितीय संशोधित संस्करण श्रावणी पूर्णिमा सं. 1990 में प्रकाशित हुआ, जिसमें पूर्व रचित छन्दों का क्रम कुछ बदल दिया गया और कवि ने कुछ अन्य छन्द रचकर इसमें जोड़ दिये, जिससे कुल मिलाकर ''आँसू'' काव्य में 680 पंक्तियाँ हो गई। आजकल यही संस्करण प्रचलित है। प्रसाद की यही पहली काव्य–रचना है, जिसने कविता के क्षेत्र में प्रसाद को अत्यधिक लोकप्रिय बनाया था, क्योंकि इसमें विप्रलम्भ श्रृंगार के अन्तर्गत प्रसाद के युवा–जीवन की वे मादक एवं मोहक स्मृतियाँ संकलित हैं, जो धनीभूत पीड़ा से ओतप्रोत होकर दुर्दिन में ''आँसू'' बनकर बरस पड़ी हैं।

''आँसू'' काव्य में कतिपय रहस्यात्मक संकेतों के कारण कुछ समालोचक इसे मानव–विरह का काव्य न मानकर अज्ञात प्रियतम

के लिए निर्मित कोई आध्यात्मिक रचना मानने का व्यर्थ प्रयास करते हैं। जैसा कि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी संकेत किया है कि ''जहाँ प्रेमी मादकता की बेसुधी में प्रियतम नीचे से ऊपर आते हैं और संज्ञा की दशा में चले जाते हैं, जहाँ हृदय की तरंगें 'उस अनन्त कोने' को नहलाने चलती है, ''आँसू'' उस 'अज्ञात प्रियतम' के लिए बहते जान पड़ते हैं।''[3] परन्तु ध्यानपूर्वक देखा जाय तो कवि ने जहाँ रहस्यात्मक संकेतों के द्वारा अथवा सांकेतिक शैली में अपने अज्ञात प्रियतम को मिलने के लिए जाने का उल्लेख किया है अथवा शशिमुख पर घूँघट डालकर अंचल में दीप छिपाये हुए जीवन की गोधूली में मिलने के लिए कौतूहल के साथ उसके आने का वर्णन किया है या मादकता में प्रियतम के आने तथा संज्ञा के आते ही उनके चले जाने का निरूपण किया है। इन सभी स्थलों पर किसी अज्ञात प्रियतम की ओर संकेत होने के कारण कुछ कबीर की सी रहस्यात्मक उक्तियाँ दिखाई पड़ती हैं, परन्तु इन उक्तियों को छायावादी शैली की विशिष्टता मान लिया जाय, तो यह स्पष्ट पता चल जाता है कि यहाँ कोई आध्यात्मिक या रहस्यात्मक प्रियतम या निरूपण नहीं हो रहा है। अपितु यह वह ज्ञात प्रियतम है, जिसका कवि के हृदय पर सर्वाधिक प्रभाव रहा है, जिसने अपने रूप सौन्दर्य की अद्‌भुत छटा से कवि के जीवन में भी वसन्त का विकास किया है और अब जैसे ही वह कवि की आँखों में ओझल हो गया है अथवा अन्यत्र कहीं चला गया है वैसे ही कवि अतीत की स्मृति में व्यग्र एवं व्यथित होकर आँसू बहाने लगा है। इसी कारण यह ''आँसू'' काव्य किसी रहस्यात्मक एवं अज्ञात प्रियतम की ओर संकेत करते हुए भी आध्यात्मिक ग्रंथ नहीं है, अपितु इसमें कवि की आत्मानुभूति ही वेदना, करुणा एवं व्यथा का सहारा लेकर अभिव्यक्त हुई है। अतएव यह ''आँसू'' काव्य मानव–विरह की एक ऐसी रचना है, जिसमें कवि अपने वैभवशाली अतीत की स्मृति से व्यथित एवं बेचैन होकर, रो–रो कर तथा सिसकियाँ भर–भर कर अपनी करुण–कथा कहता है।

''आँसू'' काव्य को मानवीय करुणा, व्यथा एवं वेदना का काव्य मानते हुए भी कतिपय विद्वान, इसमें किसी प्रकार की प्रभावान्विति स्वीकार नहीं करते। उनका यह मत है कि बिना किसी क्रम या तारतम्य के ही इसकी रचना हुई है, इसे किसी व्यवस्थित योजना के आधार पर नहीं लिखा गया है और इसी कारण इसमें कोई समन्वित प्रभाव नहीं दिखाई देता। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने संकेत भी किया है कि ''इसमें कवि कहीं तो अज्ञात प्रियतम के लिए आँसू बहा रहा है, कहीं लोक पीड़ा से व्यथित होकर 'चिरदग्धदुःखी वसुधा' को अपनी प्रेम–वेदना की कल्याणी शीतल ज्वाला का उजाला देना चाहता है और कहीं सदा जागती हुई अखण्ड ज्वाला या प्रेम–वेदना की प्रभविष्णुता का अतिरंजित वर्णन करता हुआ दिखाई देता है। कहने का तात्पर्य यह है कि वेदना की कोई एक निर्दिष्ट भूमि न होने से सारी पुस्तक को कोई एक समन्वित प्रभाव नहीं निष्पन्न होता।''[4]

प्रसाद कृत ''आँसू'' काव्य में व्यथित विश्व के प्रति हार्दिक सहानुभूति व्यक्त की गयी है। उनकी दृष्टि में जगत के सभी प्राणी व्यथित एवं व्याकुल हैं और इस जीवन में कहीं भी शान्ति एवं विश्राम नहीं है, क्योंकि विश्राम तो थककर यहाँ उच्छ्वासों और आँसुओं में सोता है। यह वसुधा तो चिर दुःखों से दग्ध है और यहाँ नभ के आँगन में दुःख की नीलिमा शयन कर रही है। इसीलिए कवि इस 'चिर–दग्ध–दुःखी' वसुधा के प्रति सहानुभूति व्यक्त करता हुआ जगती कि कण–कण से समस्त सजग व्यथाओं को चुनने की इच्छा प्रकट करता है, जिससे यहाँ कहीं वेदना की कहानी कोई न कहे और सर्वत्र जन–रंजनकारी कथाएँ सुनाई पड़ें। इसी कारण कवि अपनी कल्याणी–ज्वाला को सम्बोधन करता हुआ कह रहा है –हे अरुणे ! तुम सदा सुहागिनी हो और मानवता के सिर की रोली हो। अतः तुम जीवन–सागर में पवित्र वाड्‌वाग्नि बनकर जगती की वेदना एवं व्यथा के समस्त कलुष को जला दो और अनल बाला के समान सदैव प्रज्वलित रहो। हे ज्वाले ! तुम जग–द्वन्द्वों के परिणति की सुरभिमयी जयमाला हो, अतः संसार को किरणों के केसर से परिपूर्ण कर दो। हे कल्याणी शीतल ज्वाले ! तेरा प्रकाश पाकर ही वेदना से व्यथित संसार चेतन होता है, अतः इस निर्मम जगती को अपना मंगलमय उजाला प्रदान करो। हे मेरी प्रेमवेदने ! तुम पुनः मेरे विहँसते जीवन में जागो, जिससे मेरे मधुवन में फिर मधुर भावनाओं का कलरव होने लगे, अभिलाषा के सरोवर में फिर सरसिज खिल उठें, मधुर भावों के मधुकर गुंजार करने लगें, फिर से कोमल कुसुमों के वन में कमरंद की वृष्टि होने लगे और नभ की खाली प्याली लेकर यह विश्व तुमसे मधु की कुछ बूँदें माँगने लगे।

मैं चाहता हूँ कि प्राची के अरुण मुकुट में तुम्हारा ही प्रतिबिम्ब दिखाई दे और असल उषा में तुम्हारी ही छवि का दर्शन करूँ। हे मेरे जन्म–जन्म के जीवन–साथी ! तुम संसृति में सुख भरते हुए जागो, जिससे सर्वत्र दुःख की निशा के स्थान पर सुख का पावन प्रभात दिखाई दे, तुम्हारे सम्पर्क से जगती का कालुष्य पवित्र हो जाये और सारा पाप भी पुण्य बन जाये। हे मेरी चिर जीवनसंगिनी ! तुम कुछ और नहीं केवल दुःखदग्ध हृदय की वेदना हो, अश्रुमय रंगिनी हो। मैं तुम्हें जब भूल जाता हूँ, तब तुम हूक–सी बनकर मेरे अंतःकरण के रंगस्थल में आ उपस्थित होती हो। तुमने यहाँ रजनी की श्यामल छाया में मानस–कुमुदों को रोते देखा है, शक्ति किरणों को हँस–हँसकर मकरन्द के मोती पिरोते देखा है, बौने जलनिधि को शशि छूने के लिए ललचाते देखा है। तुमने अगणित शैल–मालाओं जैसे दृढ़ प्रतिज्ञ व्यक्तियों को अतीत काल से मौन रहकर अभिशाप ताप की ज्वालाएँ झेलते देखा है, तुमने कलियों के साथ मनमानी करके मधुपों को उड़ जाते देखा है, तुमने इस जगती के चिर वंचित भूखों की निराशा–भरी आँखों में सूखे आँसुओं को देखा है और अपनी प्रलय दशा को भी देखा है। तुमने वसुधा की करुण कहानी को सूखी सरिता के कूलों में लीन होते देखा है। तुमने उस स्नेह भरे लघु दीपक को देखा है, जो सूनी कुटिया में रात भर जलकर सहसा बुझ जाता है। इसलिए तुमसे मेरा विनम्र निवेदन है कि तुम सबका निचोड़ लेकर दुःख से सूखे जीवनों में हरियाली लाने के लिए प्रातःकालीन ओस की बूँदों जैसे 'आँसू' लेकर विश्व–सदन में बरसाती रहो। कवि की विश्व के प्रति यही हार्दिक सहानुभूति है, जो चिरदग्धदुःखी वसुधा को देखकर 'आँसू' के अन्तिम भाग में अभिव्यक्त हुई है।

इस प्रकार ''आँसू'' काव्य में मानवीय विरह–वेदना का मनोवैज्ञानिक ढंग से योजना–बद्ध निरूपण हुआ है। ''आँसू'' एक उत्कृष्ट विरह–काव्य है, जिसमें कवि ने करुणा, व्यथा, वेदना एवं दुःख का सजीव वित्रण किया है, लौकिक प्रेम को जीवन, मृत्यु और अमरता का मुख्य आधार बताकर 'चिरदग्धदुःखी' वसुधा को आनन्दमयी नवचेतना प्रदान करने वाला सिद्ध किया है, संयोग–सुख की मादक स्मृति से उत्पन्न अन्तःकरण की तड़पन एवं छटपटाहट की मनोरंजक झाँकियाँ अंकित की हैं और प्रेम–वेदना को व्यष्टि–कल्याण करने वाली सिद्ध करते हुए समष्टि–कल्याण के लिए भी परमावश्यक घोषित किया है। डॉ. विनयमोहन शर्मा ने ठीक ही लिखा है कि ''आँसू की आत्मा को देखने पर उसमें तारतम्य जान पड़ता है। अतः प्रबन्धमय है।[5] परन्तु मैं डॉ. शर्मा की इस बात से सहमत नहीं कि ''आँसू'' में मुक्तत्व भी है और प्रबन्धत्व भी है।''[6] यह ठीक है कि ''आँसू'' का प्रत्येक पद अपनी संगीतात्मकता एवं भावानुभूति की तीव्रता के कारण मोती की तरह चमकता है, परन्तु उन मोतियों का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है, वे सब लड़ी के तार में गुँथकर ही अपनी 'आबग' दे रहे हैं और उनको एक माला में इतने सुन्दर ढंग से पिरोया गया है कि वे सब के सब मिलकर अपने समन्वित प्रभाव से पाठकों एवं श्रोताओं को आनन्द–विभोर कर देते हैं। अतः

'आँसू' में अन्तर्जगत् का पूर्ण एवं समग्र चित्र अंकित होने के कारण तथा प्रेम वेदना की सुनियोजित उद्भावना का वर्णन होने के कारण प्रबन्धत्व विद्यमान है।

''आँसू'' काव्य में प्राकृतिक सौन्दर्य की छटा विद्यमान है। यहाँ रूप–सौन्दर्य के अनंक मार्मिक एवं चित्ताकर्षक चित्र अंकित किये गए हैं, जिनमें चिरयौवन से उद्दीप्त रूप–सीमा की मनोरम झाँकी है, आँखों में बसने वाली सुछवि की सजीव प्रतिमा है, लाखों में अलग दिखाई देने वाली ऐसी अनुपम कान्ति है, जिसने प्रेमी के ह्रदय में लकीर बना दी है तथा कला की कमनीयता से भरी हुई ऐसी सुषमा है जो इस मिथ्या जगत में भी सत्य एवं चिरसुन्दर जान पड़ती है। कवि ने उस अनुपम सुन्दरी के मुख की झाँकी अंकित करते हुए लिखा है कि चन्द्रमा को न जाने किसने काली जंजीरों से बाँध रखा है और मणि वाले सर्पों का मुख न जाने क्यों हीरों से भरा हुआ है। उसकी काली–काली आँखों में जीवन के मद की लालिमा ऐसी छलक रही है, जैसे मानो नीलम की प्याली में लाल मंदिरा भरी हो। काजल से सुशोभित उसकी आँखें ऐसी लग रही हैं, मानो अतृप्ति के सागर में नीलम की नाव तैर रही हो। उसकी बरौनी ने तूलिका की तरह न जाने कितने घायल ह्रदयों को क्षितिज–पटी पर अंकित कर दिया है। उसके कपोलों की सीधी सादी स्मित रेखा और भौंहों की कुटिलता दर्शनीय है। उसके रक्तिम होठों में दाँत ऐसे चमकते हैं जैसे विद्रुम सीपी के सम्पुट में मोती के दाने रखे हुए हों और नासिका तोते के समान है। उसकी हँसी विकसित कमलों का भी उपहास करने वाली है। उसके दोनों कान पुरइन के किसलय तुल्य हैं, जिन पर जल–बिन्दु के समान किसी के भी दुःख की बातें कभी नहीं ठहरतीं। उसकी अलबेली एवं लचीली भुजाएँ या तो कामदेव के धनुष की दुहरी शिथिल डोरियाँ हैं या छवि–सरोवर की दो नवीन लहरें हैं। उसके पवित्र शरीर की शोभा इतनी आलोक–मधुर है, मानो बिजली चन्द्रिका–पर्व में स्नान करके आई हो। इस प्रकार कवि ने 'आँसू'' में रूप–सौन्दर्य की अद्भुत झाँकी प्रस्तुत की है जिसमें छलकते हुए जीवन की मादक मधुरिमा के साथ कवि की नूतन सौन्दर्यानुभूति विद्यमान है।

''आँसू'' में कवि ने भाव–सौन्दर्य की भी अद्भुत झाँकी अंकित की है। सारा ''आँसू'' काव्य वियोग–जन्य पीड़ा, उत्कट वेदना, असीम सन्ताप आदि के साथ–साथ स्मृति, मोह, ग्लानि, चिन्ता, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद आदि का रमणीय चित्र फलक है। यहाँ विविध संचारी भावों के साथ–साथ विप्रलम्भ श्रृंगार की सभी काम–दशाएँ अपनी मधुरिमा के साथ अंकित हुई हैं। संचारी भावों में से स्मृति, मोह, चिन्ता, जड़ता, विषाद, ग्लानि, धृति, पीड़ा, असूया, निद्रा, स्वप्न, अमर्ष, औत्सुक्य आदि के चित्र यहाँ बड़ी सजीवता के साथ अंकित हुए हैं। 'मानस सागर के तट पर क्यों लोल लहर की घातें'' से लेकर 'चेतना तरंगिनि मेरी लेती है मृदुल हिलोरें' तक 'स्मृति' संचारी भाव का अत्यन्त मार्मिक चित्रण हुआ है। 'इस विकल वेदना को ले' से लेकर 'बेसुध चैतन्य हमारा' तक 'मोह' संचारी भाव विद्यमान है। 'छिप गई कहाँ छूकर' से लेकर 'मुरली बजती निर्जन में' तक 'चिन्ता' संचारी भाव है। 'मधु राका मुसक्याती थी' से लेकर 'कर देता दान सुकवि को' तक 'जड़ता' संचारी भाव है। 'सोयेगी कभी न वैसी' से लेकर 'विकसा मानस में सूखा' तक 'विषाद' संचारी भाव विद्यमान है। इस प्रकार विविध संचारी भावों के अत्यन्त रमणीय चित्र भाव–सौन्दर्य के उज्ज्वल उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इतना ही नहीं 'आँसू' में विविध काम दशाओं के भी रमणीय चित्र अंकित हुए हैं।

''आँसू'' में प्रकृति–सुन्दरी के अलौकिक सौन्दर्य की झाँकियाँ भी बड़ी सुन्दरता एवं मार्मिकता के साथ अंकित हुई है। यहाँ कवि ने संयोग के क्षणों में प्रकृति को भी आनन्द–उल्लास में निमग्न अंकित किया है। इसी कारण यहाँ संयोग के अवसर पर डालें पेड़ों के गले में बाँहें डालकर झूमती हैं, भौरे फूलों का चुम्बन करके मधुर तान छेड़ते हैं, भौरों की मादक ध्वनि सुनकर कलियाँ मुस्कराती हैं और वे मकरन्द से परिपूर्ण होकर पूर्ण विकास को प्राप्त होती हैं। इसके विपरीत जब मानव शोक, विरह एवं सन्ताप से व्यथित हो उठता है, तब प्रकृति भी उसके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करती हुई आह, कराह एवं टीस से परिपूर्ण हो अपनी व्यथा प्रकट करती है। उस क्षण वसन्त की मादक पवन विरह से बेचैन होकर धीरे–धीरें बहती हुई आहें छोड़ती–सी जान पड़ती है, प्राथी, दिशा के कपोल पीले–पीले जान पड़ते हैं और ओस की बूँदें आँसुओं की बूँदें, सी दिखाई देती है, जो आकाश के रोने के कारण फूलों पर बरस पड़ी हैं। इतना नहीं, कवि ने प्रकृति में विद्यमान उस विषमता (कन्ट्रास्ट) को भी अंकित किया है, जो प्रायः मानव–समाज में भी दृष्टिगोचर होती है। जैसे, कोई व्यक्ति तो असीम सुखों से आनन्द–विभोर है और कोई रात–दिन व्यथा से तड़प रहा है। यही विषमता प्रकृति में भी विद्यमान है। जैसे प्रकृति के अन्दर आकाश असीम सुखों सेस उल्लसित होकर रात को अपने नक्षत्र–समाज को लेकर खूब हँसता–सा दिखाई देता है और नीचे बेचारी धरणी विविध प्रकार के दुःखों को वहन करती हुयी अपने खारी आँसुओं से करुणा के सागर को भरती रहती है। अतएव ऐसे विषमता मूलक चित्र भी प्राकृतिक सौन्दर्य को प्रकट कर रहे हैं।

फिर भी ''आँसू'' में विरह–व्यथा–पूर्ण ह्रदयद्रावक चित्र अधिक अंकित हुए हैं, जिनमें कहीं रुदन करती हुई रजनी को आलोक–बिन्दु के रूप में आँसू बहाते हुए चित्रित किया गया है, कहीं उत्ताल तरंगों वाले जलधि के तटवर्ती पहाड़ों को अपनी छाती में जलन छिपाए हुए इस निस्तब्ध गगन के नीचे सिर उठाए खड़े अंकित किया गया है, कहीं बौने सागर को चन्द्रमा को छूने के लिए ललचाते हुए और उठ–उठकर गिरते हुए हाहाकार मचाते हुए अंकित किया गया है, कहीं शैल–मालाओं को अतीत युग से मौन रह कर अभिशाप–ताप की ज्वालायें झेलते हुए अंकित किया गया है और कहीं कलियों को कपट कहानी सुनकर तथा उनके साथ मनमानी करके भौंरां के उड़ जाने का चित्रण किया गया है। इस प्रकार ''आँसू' में विविध प्रकार के सौन्दर्य–चित्र विद्यमान हैं, जिसमें प्रकृति के सचेतन रूप की झाँकी अंकित हुई है और कवि की मार्मिक अनुभूति अपनी रमणीयता के साथ व्यक्त हुई है।

## निष्कर्ष

निष्कर्षतः महाकवि जयशंकर प्रसाद के काव्यों में ऐन्द्रिक, श्रव्य, स्पृश्य, ध्राण, आस्वाद्य, स्मृति एवं अनुभूति, दृश्य, वर्ण, सांस्कृतिक, पौराणिक, मनस बिम्ब भाव बिम्ब, विचार बिम्ब, कल्पना बिम्ब, दिवास्वप्न बिम्ब, प्रतीकात्मक बिम्ब, प्रकृति बिम्ब, प्रणय बिम्ब, अमूर्त बिम्ब, मूर्त बिम्ब तथा जीवनोनुरक्त विविध बिम्बों की प्रतिष्ठा की गयी है। शब्द, स्पर्श, रस, गंध के भी अपने–अपने बिम्ब होते हैं। प्रायः उन्हें भी रूप का आधार लेना पड़ जाता है। काव्य बिम्ब ऐन्द्रिक प्रतिनिधि होता है। प्रसाद जी की दृष्टि में भाव काव्य बिम्ब का अनिवार्य तत्व ही नहीं वरन उसकी आत्मशक्ति है। महाकवि प्रसाद का सम्पूर्ण काव्य बिम्बों की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है।

बिम्ब विधान के मूल में कवि की लालित्य चेतना काम करती है। युग की विचारधारा के अनुसार बिम्ब के स्वरूप में वैशिष्ट्य आ जाता है। नवीन भाव बोध को व्यंजित करने के प्रयास में सक्रिय कवि कल्पना, रमणीय भंगिमा वाले बिम्बों का संयोजन करती है। सौन्दर्य परख छायावादी काव्य बिम्बों के वैभव से युक्त है।

रूप बिम्ब के अन्तर्गत कवि प्रसाद ने पांच ज्ञानेन्द्रियों में नेत्र श्रेष्ठ है। नेत्र का विषय रूप है। रूप के प्रति आकर्षण प्राणि मात्र की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। अतः चिन्ताकर्षक काव्य में रूप–चित्रण की अतिसैयता पायी जाती है। ''दिनकर जी की मान्यता है कि – "चिन्तमयता ही कविता को विज्ञान से अलग करती है। दार्शनिक

और इतिहासकार जिस ज्ञान को सूचना के भण्डार में जमा करते हैं, कवि उसी ज्ञान को चित्र बनाकर लोगों की आंखों के आगे तैरा देता है। जिस कविता में जितने अधिक चित्र उठते हैं उसकी सुन्दरता भी उतनी ही अधिक बढ़ जाती है।''[7]

जयशंकर प्रसाद ने चित्रमयता को कविता का स्वाभाविक लक्षण माना है। कवित्व वर्णमय चित्र है, जो स्वर्गीय भावपूर्ण संगीत गाया करता है।[8] चित्रात्मकता को काव्य का अनिवार्य धर्म माना जाये या न माना जाये, किन्तु यह बात सर्वथा ग्राह्य है कि चित्रमयता कविता की अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता है जो उसके लालित्य और प्रभविष्णुता को उत्कर्ष प्रदान करती है। काव्य निबन्ध वस्तु का भावन करते ही सहृदय का नेत्र तंत्र अप्रत्यक्ष रूप से सक्रिय हो उठता है।

प्रसाद की प्रथम रचना चित्राधार में संकलित 'कथा मूलक' भाव वाली कविताएँ कुल तीन हैं– 'वन मिलन', 'अयोध्या का उद्धार' और 'प्रेमराज्य' परन्तु इस प्रकार की आख्यानात्मक कविताएँ वे 1936 ई. तक लिखते रहे हैं। 'पेशोला की प्रतिध्वनि', और 'प्रलय की छाया' भावमूलक कविता का बनावट और बुनावट के तनाव या शब्द और अर्थ की स्पर्धा की दृष्टि उदाहरण है। 'महाराणा का महत्व' और 'प्रेमपथिक' जो चित्राधार के प्रथम संस्करण में छपी थी, बाद में स्वतंत्र भी छपी प्रसाद के 'कलात्मक और रचनात्मक विकास' के लिए आवश्यक है। आख्यान कविताओं से ही उन्होंने कलात्मक संयम प्राप्त किया। एक प्रकार से ये रचनाएँ उनकी काव्य साधना के सोपान हैं।[9]

## सन्दर्भ


1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 669.
2. हिन्दी साहित्य–बीसवीं शताब्दी, पृष्ठ 111.
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 680, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल.
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 680–681, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल.
5. कवि प्रसाद, आँसू तथा अन्य कृतियाँ, पृष्ठ 86, डॉ. विनयमोहन शर्मा.
6. वही, पृष्ठ 87.
7. काव्य की भूमिका, पृष्ठ 9, रामधारी सिंह दिनकर.
8. स्कंदगुप्त, पृष्ठ 21.
9. प्रसाद का सम्पूर्ण काव्य, पृष्ठ 17–18, डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र